International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(1): 441-443

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(1): 441-443
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 03-11-2020
Accepted: 15-12-2020

दीपक कालिया
ज़ाकिर हुसैन दिल्ली कॉलेज (प्रातः),
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
दीपक कालिया
ज़ाकिर हुसैन दिल्ली कॉलेज (प्रातः),
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

शाकुन्तलम् का अभिज्ञान अंक

दीपक कालिया

सारांश
कविकुलगुरू कालिदास विरचित सुप्रसिद्ध नाटक अभिज्ञानशाकुन्तलम् के सात अंकों में षष्ठ अंक वस्तुतः सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रतीत होता है। इसे अभिज्ञान अंक कहा जा सकता है। क्योंकि नाटक के नामकरण को सार्थक करने वाले इस अंक की घटनाओं की नाट्यशास्त्र की दृष्टि से विशेष भूमिका है। अभिज्ञानशाकुन्तलम् के षष्ठ अंक में चेटियों द्वारा वसन्तऋतु का वर्णन, सानुमति अप्सरा का प्रसंग और मातलि द्वारा विदूषक के निग्रहण का वृतान्त "प्रकरी" नामक अर्थप्रकृति के अन्तर्गत है। अंगूठी की प्राप्ति होने पर सब विघ्न दूर हो जाते हैं। सानुमति के "देवा एव तथानुष्ठास्यन्ति यथाचिरेण धर्मपत्नी भर्ताभिनन्दिष्यति" वचन से निश्चित प्राप्ति सूचित होती है यह फलागम की सूचना एवं शकुन्तला का अभिज्ञान इसी अंक के माध्यम से होता है। प्रायः संस्कृत साहित्य में काव्यों का नामकरण उनकी विशेष घटनाओं के आधार पर किया गया है और नाटक में जिस अंक में उस घटना का वर्णन होता है वह अंक विशिष्ट माना जाता है। "अभिज्ञानम् च तत् शाकुन्तलम् अभिज्ञानशाकुन्तलम्" इस व्याख्या के अनुसार अभिज्ञान से अंगूठी और शाकुन्तल से शकुन्तला सम्बन्धी अर्थ ग्रहण किया जाए तो ऐसी स्थिति में अभिज्ञान शाकुन्तल का अर्थ होगा– "शाकुन्तला की पहचान"। इस अभिज्ञानशाकुन्तलम् में शकुन्तला की पहचान षष्ठ अंक में होती है अतः षष्ठ अंक की महता सर्वाधिक है। प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य शाकुन्तलम् के षष्ठ अंक को अभिज्ञान अंक कहते हुए अन्य अंकों की अपेक्षा नाट्य कौशल एवं नामकरण की दृष्टि से महत्वपूर्ण सिद्ध करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्दः अभिज्ञान, मुद्रिका, अर्थोपक्षेप प्रत्याख्यान, सहजकर्म, प्रजारंजक, अतिप्राकृतिकता

प्रस्तावना
"कालिदासस्य सर्वस्वमभिज्ञानशाकुन्लतम्" अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक की महत्ता को प्रतिपादित करने वाला यह कथन वस्तुतः सत्य है। सप्ताकों में निबद्ध अभिज्ञानशाकुन्तलम् के प्रायः सभी अंक महत्वपूर्ण हैं। चतुर्थ अंक के विषय में तो कहा है–

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शाकुन्तला।
तत्राऽपि चतुर्थोऽकः तत्र श्लोकचतुष्ट्यम्।।

परन्तु षष्ठ अंक तो सम्पूर्ण नाटक की आत्मा ही प्रतीत होती है क्योंकि इस अंक में घटित घटनाएं, नाट्यकौशल, काव्यसौन्दर्य एवं सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक मर्यादाओं का चित्रण बहुत ही स्वाभाविक एवं व्यावहारिक है। शकुन्तला की स्मृति राजा को होती है मुद्रिका की प्राप्ति से शकुन्लता का अभिज्ञान अर्थात् प्रत्यास्मरण होता है। अतः इस अंक को अभिज्ञान अंक भी कहा जा सकता है। प्रस्तुत शोधपत्र में नाट्यशास्त्रीय, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक एवं काव्यसौन्दर्य इन बिन्दुओं के आधार पर इस अंक के महत्व को प्रतिपादित करने का प्रयास किया गया है।
नाट्यशास्त्रानुसार नाटक का नाम नायक, नायिका अथवा प्रमुख घटना पर आधारित होना चाहिए। अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक का नाम "अभिज्ञान" घटना के आधार पर है जिसमें शाप के कारण विस्मरण की गई शकुन्लता को दुष्यन्त ने पहचाना है। यह घटना षष्ठ अंक में घटित होती है। "अभिज्ञान" का माध्यम मुद्रिका का पुनः प्राप्त होकर राजा को शकुन्तला की स्मृति दिलाकर उसे याद करना ही "अभिज्ञान" है।
अभिज्ञानम् च तत् शाकुन्लतम् इस व्युत्पत्ति के अनुसार अभिज्ञान से मुद्रिका (अभिज्ञायतेऽनेनेति) और शाकुन्तल से शकुन्तला सम्बन्धी (शकुन्तलया इदम्–शकुन्तला+अण्) अर्थ ग्रहण किया गया है। ऐसी स्थिति में भी अभिज्ञानशाकुन्तल का अर्थ है– शकुन्तला की पहचान। इस अंक की घटना के आधार पर ही नाटक का नामकरण हुआ है अतः इस अंक को "अभिज्ञान" अंक कहना युक्तिसंगत प्रतीत होता है।
भारतीय नाट्यपरम्परा के अनुसार कुछ घटनाओं का रंगमंच पर अभिनय करना वर्जित है जैसे कि मृत्यु एवं नीरस कथावस्तु आदि, परन्तु कथा सूत्र को अविच्छिन्न रखने के लिए इनकी सूचना आवश्यक होती है।
अतः इस सूच्य कथावस्तु का प्रतिपादन पांच अर्थोपक्षेपकों (विष्कम्भक, चूलिका, अंकास्य अंकावतार, प्रवेशक) के द्वारा किया जाता है।[1] शाकुन्तल के षष्ठ अंक का प्रारम्भ "प्रवेशक" द्वारा किया गया है।

दशरूपककार के मतानुसार भूत और भविष्य के कथांशों का सूचक नीच पात्रों द्वारा अनुदात्त उक्तियों से प्रयुक्त, दो अंकों के बीच में स्थित तथा शेष (अप्रदर्शनीय) अर्थ का सूचक "प्रवेशक" कहलाता है।[2] षष्ठ अंक में प्रवेशक के माध्यम से कवि ने सूचना दी है कि शकुन्तला के प्रत्याख्यान के पश्चात् एक धीवर को शक्रावतार तीर्थ से दुष्यन्त की मुद्रिका प्राप्त हुई तथा वह राजा के पास लाई गई जिससे राजा को शकुन्लता की स्मृति हो गई है और राजा शकुन्लता को स्मरण कर प्रत्याख्यान के पश्चाताप से व्याकुल है। यह सूचना दुष्यन्त एवं शकुन्तला के पुनर्मिलन की ओर संकेत करती है।

कथावस्तु के विकास में नाट्यशास्त्रियों ने पांच अर्थ प्रकृतियों, पांच अवस्थाओं एवं पांच सन्धियों के सन्निवेश का विधान किया है। कथा के मुख्य प्रयोजन की सिद्धि में सहायता देने वाले उपादानों को "अर्थप्रकृतियां" कहा गया है वे है– बीज, बिन्दु, पताका प्रकरी और कार्य।[3] षष्ठ अंक का सानुमति प्रसंग और वसन्त ऋतु का वर्णन। ये "प्रकरी" अर्थप्रकृति के अन्तर्गत हैं क्योंकि ये वर्णन प्रधान फल (शकुन्तला मिलन) की प्राप्ति में नाट्य (दुष्यन्त) के सहायक सिद्ध होते हैं। इनमें मेनका अपनी सानुमती नाम की अप्सरा सखी को राजा की दशा का पता लगाने का काम सौंपती है। वसन्त का मौसम होता है। राजा शकुन्लता को याद कर पश्चाताप कर रहा है उसने वसन्तोत्सव मनाने का निषेध कर दिया है। सानुमती अदृश्य होकर दुष्यन्त की दशा को देख रही है। जिससे वह आंखों देखा हाल मेनका को बता सके। जिससे प्रधान फल की सहजरूप से प्राप्ति हो जाए।

फलाभिलाषी पात्रों द्वारा आरम्भ किए गए कार्य की पांच अवस्थाएं मानी है[4]– आरम्भ, यत्न, प्राप्त्याशा, नियताप्ति और फलागम, षष्ठ अंक में धीवर के प्रसंग से मुद्रिका प्राप्ति के बाद फल की प्राप्ति का निश्चय हो जाता है अतः यहां "नियताप्ति" नामक कार्यावस्था है। दशरूपकार के अनुसार "अपायाभावतः प्राप्तिर्नियताप्तिः सुनिश्चिता[5]" अर्थात् विघ्नों के अभाव से फल की निश्चित रूप से प्राप्ति ही नियताप्ति है। मुद्रिका के खो जाने से जो विघ्न उत्पन्न हुआ था वह उसकी प्राप्ति से दूर हो गया और शकुन्तला का स्मरण हो जाना फल की प्राप्ति की आशा को पूर्ण करता है।

प्रधान प्रयोजन से सम्बन्ध रखने वाले कथांशों को अवान्तर एक प्रयोजन से सम्बन्ध 'सन्धि' कहलाता है।[6] प्रकृतियों एवं अवस्थाओं के मिश्रण से सन्धियों का निर्माण होता है।[7] मुख्य, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श एवं निर्वहण[8] मुख्य सन्धि में बीज और आरम्भ, प्रतिमुख में बिन्दु और यत्न, गर्भ में पताका और प्राप्त्याशा, विमर्श में प्रकरी एवं नियताप्ति तथा निर्वहण में कार्य एवं फलागम हैं। षष्ठ अंक में विमर्श सन्धि है। जहां क्रोध से, व्यसन (दुःख आपत्ति) से या प्रलोभन से फल प्राप्ति के विषय में विमर्श किया जाता है तथा जिसमें गर्भ सन्धि द्वारा बीजार्थ का सम्बन्ध दिखाया जाता है वह अवमर्श या विमर्श सन्धि कहलाती है।[9] अवमर्श या विमर्श का अर्थ है– ऊहा–पोह करना या पर्यालोचन। यह क्रोध, आपत्ति, विलोभन आदि कारणों से होता है। षष्ठ अंक में मुद्रिका प्राप्ति से शकुन्तला का अभिज्ञान इसी ओर संकेत देता है कि शकुन्तला मिलेगी या नहीं और फल की आशा भी हो जाती है अतः यहां विमर्श या अवमर्श सन्धि है।

इस प्रकार षष्ठ अंक में नाट्यशास्त्रीय तत्वों का समुचित निर्वाह किया गया है। समाज को सहजकर्म की ओर प्रेरित करना इस अंक की विशेषता है। दोषयुक्त होने पर भी मनुष्य सहज कर्म का त्याग न करे– "सहजं कर्म कौन्तेय सदोषमपि न परित्यजेत्"।[10] श्रीमद्भगवद्गीता के इस महान उद्घोष की अनुध्वनि धीवर के इस कथन से स्पष्ट रूप से सुनाई देती है–

सहजं किल यद्विनिन्दितं न खलु तत्कर्मविवर्जनीयम्[11]
पशुमारणकर्मदारूणोऽनुकम्पा–मृदुरेव श्रोत्रियः।। (6/5)

भाव यह है कि "मानव जाति का हित इसी बात में निहित है कि वह जन्म से प्राप्त हुए सहज कर्म का परित्याग न करे।

निःसंतान होना समाज में मान्य नहीं था। निःसंतान धनमित्र वणिक् की मृत्यु का समाचार सुनकर दुष्यन्त कहता है कि– "कष्टं खल्वनपत्यता"।[12] दुष्यन्त स्वयं भी निःसंतान होने की चिन्ता से व्याकुल हो कहता है– अहो दुष्यन्तस्य संशयमारूढ़ाः पिण्डभाजः।[13] क्योंकि मेरे पश्चात् हमारे कुल में श्राद्धतर्पणादि कौन प्रदान करेगा? इस प्रकार सोचकर मेरे पितर निश्चय ही सन्तान के लिए व्याकुल मेरे द्वारा दिए गए जल को, आंसू धोने से बचे हुए जल को पीते हैं।[14]

इस अंक में कोतवाल एवं सैनिकों के व्यवहार से यह ज्ञात है कि तत्कालीन समाज में रिश्वत लेने तथा मद्यपान का भी प्रचलन था, क्योंकि जब धीवर को राजा पुरस्कार देता है तो कोतवाल आधा अंश रिश्वत के रूप में खुश होकर ग्रहण कर लेता है तथा मित्रता को निभाने के लिए मदिरालय जाने का प्रस्ताव रखता है– "इतोऽर्धं युष्माकं सुमनो मूल्यं भवतु।..... धीवर, महत्तरस्वं प्रियवयस्य इदानीं में संवृत्तः। कादम्बरी–साक्षिकमस्माकं प्रथमशोऽभिमतमिष्यते। तच्छौण्डिकापणमेव गच्छामः।[15] आज भी समाज के कुछ वर्गों में मदिरापान द्वारा मैत्री का प्रदर्शन किया जाता है।

उत्सवप्रियाः खलु मनुंष्याः[16]– यह कथन बताता है कि– समाज में लोगों की उत्सव मनाने मे रूचि थी। षष्ठ अंक में वसन्त के आगमन पर कामदेव की अर्चना इसका प्रमाण है। उस समय वसन्तोत्सव बहुत धूमधाम से मनाया जाता था। राजा द्वारा वसन्तोत्सव का निषेध किए जाने पर कंचुकी कहता है– "अनात्मज्ञे देवेन प्रतिषिद्धे वसन्तोत्सवे"।[17]

विदूषक द्वारा कहा गया यह कथन– न खलु मातापितरौ भर्तृवियोगदुःखितां दुहितरं द्रष्टुं पारयतः।[18] तत्कालीन पुत्रीविषयक माता पिता के मनोभावों का यथार्थ चित्रण है जोकि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भी यथावत देखने को मिलता है।

राजनैतिक दृष्टि से इस अंक में राजा का प्रजा के प्रति भाव विशेष महत्वपूर्ण है। धनमित्र की मृत्यु के पश्चात् उसकी सम्पत्तिविषयक घोषणा सुनकर राजा दुष्यन्त कहता है–

येन येन वियुजयन्ते प्रजाः स्निग्धेन बन्धुना।[19]
स स पापादृते तासां दुष्यन्त इति घुष्यताम्।। (6/23)

यह कथन दुष्यन्त के प्रजारंजक स्वरूप को बताता है। राजकार्यों में राजा पुरोहित एवं मंत्रियों से सहयोग प्राप्त करता था। इस अंक में पिशुन नामक मन्त्री पर राजकार्यों का भार सौपकर राजा विश्राम करता है। राजा वेत्रवती से कहता है[20] "वेत्रवति! मद्वचनादमात्यमार्यपिशुनं ब्रूहि! चिरप्रबोधनान्न सम्भावितमस्माभिरद्य धर्मासनमध्यासितुम्। यत्प्रत्यवेक्षितं पौरकार्यमार्येण तत्पत्रमारोप्य दीयतामिति।"

अतिप्राकृतिकता इस अंक की अन्यतम विशेषता है। मेनका की सखी सानुमती जो एक अप्सरा है, आकाश यान से उतरकर अदृश्य रूप में दुष्यन्त की वास्तविक मानसिक स्थिति का स्वयं अवलोकन करती है। इस अंक में देवाधिपति इन्द्र का सारथि मातलि एक अतिप्राकृतिक शक्ति से सम्पन्न व्यक्ति के रूप में सामने आता है। वह तिरस्करिणी विद्या के बल पर अदृश्य रूप में विदूषक की गर्दन को गन्ने की तरह मरोड़ने लगता है– एष मां कोऽपि पश्चान्मोटितशिरोधरामिक्षुदण्डमिव त्रिभंगं करोति।[21]

यह प्रसंग दुष्यन्त के अन्दर विद्यमान तेज को प्रकट करता है। इस विषय में कहा है–

"प्रायः स्वं महिमानं क्षोभात् प्रतिपद्यते हि जनः"।[22]

राजनैतिक शिष्टाचार विषयक ये कथन– "नन्वसरोपसर्पणीया राजानः[23]" अर्थात् राजाओं के पास अवसर देखकर जाना चाहिए। "नार्हति भावोऽकारणमारणं भावयितुम्" [24] – बिना कारण मारने का विचार नहीं करना चाहिए। आज के संदर्भ में भी सटीक है।

ईमानदारी करने पर पारितोषिक एवं बुरा कर्म करने पर दण्डविधान था। धीवर को जब राजा दण्ड न देकर पुरस्कार देता है उस विषय में कहा है–

एष नामानुग्रहो यच्छूलादवतार्य हस्तिस्कन्धे प्रतिष्ठापितः।[25]

विधवा का पति की सम्पत्ति पर कोई अधिकार न था परन्तु यदि विधवा गर्भिणी हो तो उसका गर्भस्थ शिशु अपने पिता की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी माना जाता था। यदि ऐसा न हो तो मृत व्यक्ति की सम्पत्ति राजकोष में चली जाती थी। इस प्रकार निःसंतान व्यक्ति की सम्पत्ति पर राजा का अधिकार हो जाता था। षष्ठ अंक में धनमित्र बनिए की नाव दुर्घटना में जब मृत्यु हो जाती है तो उसकी सम्पत्ति के उत्तराधिकार की समस्या का समाधान इसी प्रकार किया जाता है।

षष्ठ अंक में काव्यसौन्दर्य भी दर्शनीय है। इस अंक में धीवर प्रसंग द्वारा हास्य रस का वातावरण प्रस्तुत किया है तदनन्तर विप्रलम्भ श्रृंगार का ही प्रयोग किया है वैदर्भी रीति में सिद्धहस्त होने के कारण भाषा शैली माधुर्य गुण से युक्त है। व्यंजना का प्रयोग भी किया गया है। अलंकारों का संयत प्रयोग है।

अर्थान्तरन्यास के प्रयोग में कालिदास अप्रतिम है। प्रकृति चित्रण तो सम्पूर्ण नाटक में अनुपम है। षष्ठ अंक में पश्चाताप की अग्नि में झुलसती दुष्यन्त की आत्मा को प्रकृति अपना स्निग्ध लेप लगाती चित्रित की गई है।

शकुन्तला के प्रत्याख्यान की घटना को स्मरण करते हुए दुष्यन्त का बार–बार अधीर हो उठना विप्रलम्भ श्रृंगार का आकर्षण उत्पन्न करता है[26]–

> इतः प्रत्यादेशात्स्वजनमनुगन्तुं व्यवसिता, मुहुस्तिष्ठेत्युच्चैर्वदति गुरूशिष्ये गुरूसमे।
> पुनर्दृष्टि वाष्पप्रसरकलुषामर्पितवती, मयि क्रूरे यत्तत्सविषमिव शल्यं दहित माम् (6/9)

इस प्रकार षष्ठ अंक नाट्यशास्त्रीय नियमों के निर्वाह की दृष्टि से, सामाजिक, राजनैतिक मर्यादाओं के वर्णन की दृष्टि से एवं काव्यसौन्दर्य की दृष्टि से नाटक का विशिष्ट अंक सिद्ध होता है। निष्कर्षतः मुख्य घटना का उपस्थापक होने के कारण इस अंक को 'अभिज्ञान अंक' कहना भी सर्वथायुक्ति संगत है।

संदर्भ

1. अथोपक्षेपकैः सूच्यं पंचभिः प्रतिपादयेत्।
   विष्कम्भचूलिकांङ्स्याङ्वतारप्रवेशकैः।।58।।
   दशरूपक प्रथम प्रकाश पृष्ठ 97
2. तद्वदेवानुदात्तेक्त्या नीचपात्रप्रयोजितः।
   प्रवेशोऽकाद्वयस्यान्तः शेषार्थस्यापसूचक।।60।।
   वही, पृष्ठ 98
3. बीजबिन्दुपताकारव्यप्रकरीकार्यलक्षणः।
   अर्थप्रकृतयः पंच ता एताः परिकीर्तिता।।18।।
   वही, पृष्ठ 21
4. अवस्थाः पंच कार्यस्य प्रारब्धस्य फलार्थिभः।
   आरम्भयत्नप्राप्त्याशनियताप्तिफलागमः।।19।।
   वही, पृष्ठ 21
5. दशरूपक ..... पृष्ठ 22
6. "अन्तरैकार्थसम्बन्ध सन्धिरेकान्वये सति।"
   दशरूपक, पृष्ठ 24
7. अर्थप्रकृतयः पंच पंचावस्थासमन्विताः।
   यथासंख्येन जायन्ते मुखाद्याः पंच सन्धयः।
   दशरूपक, पृष्ठ 24
8. मुख प्रतिमुखे गर्भः सावमशोपसंहृति।
   दशरूपक, पृष्ठ 24
9. क्रोधेनावमृशेद्यत्र व्यसनाद्वा विलोभनात्।
   गर्भनिर्मिन्नबीजार्थः सोऽवमर्श इति स्मृतः।।43।।
   दशरूपक, पृष्ठ 63
10. श्रीमद्भगवद्गीता 18/48
11. अभिज्ञानशाकुन्तलम् 6/1– सम्पादक डा. राकेशशास्त्री एवं प्रतिभाशास्त्री संस्करण संवत् 2061, संस्कृतग्रन्थागार, दिल्ली
12. वही – पृष्ठ 240
13. वही – पृष्ठ 242
14. वही – पृष्ठ 242 श्लोक 25
15. वही – पृष्ठ 214
16. वही – पृष्ठ 220
17. वही – पृष्ठ 218
18. वही – पृष्ठ 226
19. वही – 6/23
20. वही – पृष्ठ 222
21. वही – पृष्ठ 224
22. वही – पृष्ठ 248
23. वही – पृष्ठ 212
24. वही – पृष्ठ 212
25. वही – पृष्ठ 214
26. वही – पृष्ठ 226

सन्दर्भ ग्रंथ

1. श्रीधनञ्जयविरचित दशरूपकम्– सम्पादक श्रीनिवासशास्त्री, द्वादश संस्करण, 2003, साहित्य भण्डार, मेरठ
2. कालिदास विरचित अभिज्ञानशाकुन्तलम्–
   a) सम्पादक डा. सी.आर. नागपाल, 1989, नीलम पब्लिशर्स, जालन्धर
   b) सम्पादक डा. राकेशशास्त्री एवं प्रतिभाशास्त्री संस्करण संवत् 2061, संस्कृतग्रन्थागार, दिल्ली
   c) सम्पादक डा. शिवराज शास्त्री तृतीय संस्करण, मेहरचन्द लछमनदास पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
3. श्रीमद्भगवद्गीता – गीता प्रेस, गोरखपुर
4. संस्कृत के प्रमुख नाटककार तथा उनकी कृतियां– डा. गंगासागर राय, प्रथम संस्करण 2001, चौखम्भा संस्कृत भवन, वाराणसी